

भारत का सर्वोच्च न्यायालय

प्यारे मोहन लाल बनाम झारखंड राज्य और अन्य 10 सितंबर, 2010 को

लेखक:बी. एस. चौहान

बेंच:बी. एस. चौहान, दीपक वर्मा, जे. एम. पांचाल

भारत के सर्वोच्च न्यायालय में रिपोर्ट करने योग्य नागरिक मूल न्यायपालिका याचिका (नागरिक) सं। 2003 का 382 प्यारे मोहन लाल. याचिकाकर्ता बनाम झारखंड राज्य और अन्य। उत्तरदाताओं का निर्णय

[2010]11 एस सि आर 216 प्यारे मोहन लाल बनाम झारखंड राज्य और ओआरएस। (रिट याचिका (सी) नं। 2003 का 382) 10 सितंबर, 2010 जे एम] पांचाल, दीपक वर्मा और डॉ. एस एस चौहान, जे. जे.] सेवा कानून: अनिवार्य सेवानिवृत्ति-न्यायिक समीक्षा - अनिवार्य सेवानिवृत्ति का दायरा एसीआर में प्रतिकूल प्रविष्टियां-किसी व्यक्ति को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करते समय इसका महत्व-आयोजित: प्रतिकूल प्रविष्टियां एक सरकारी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने के लिए समग्र विचार के लिए अभिलेख का हिस्सा बनी रहती हैं-उद्देश्य हमेशा सार्वजनिक हित होता है-ऐसी प्रविष्टियां महत्व नहीं खोती हैं, भले ही कर्मचारी को बाद में पदोन्नत किया गया हो - कानून प्राधिकरण से अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए कर्मचारी ई का आकलन करने से पहले उसके "संपूर्ण सेवा अभिलेख" पर विचार करने की अपेक्षा करता है, इस तथ्य के बावजूद कि प्रतिकूल प्रविष्टियों के बारे में उसे सूचित नहीं किया गया था या उन प्रतिकूल प्रविष्टियों के बावजूद उसे पहले पदोन्नत किया गया था-एक एकल प्रतिकूल प्रविष्टि, यहां तक कि, सुदूर अतीत में भी, अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने के लिए पर्याप्त है।

अनिवार्य सेवानिवृत्ति-न्यायिक अधिकारी जनहित में अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त- निर्णित: न्यायिक अधिकारी के मामले की जांच की आवश्यकता होती है! उसे समाज के अन्य वर्गों से अलग मानते हुए, क्योंकि वह एक अलग क्षमता में राज्य की सेवा कर रहा है-उसके मामले पर उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की एक समिति द्वारा विधिवत विचार किया जाता है। मुख्य न्यायाधीश द्वारा गठित और फिर समिति की रिपोर्ट को पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखा जाता है-पूर्ण न्यायालय द्वारा देय एच 216 प्यारे मोहन लाल बनाम झारखंड राज्य और 217 अन्य के बाद निर्णय लिया जाता है। मामले पर विचार-विमर्श-इसलिए, निर्णय लेने की प्रक्रिया या निर्णय में गलती नहीं पाई जा सकती है पिछले वर्षों के न्यायिक अधिकारी के वार्षिक सेवा पुस्त में कुछ प्रविष्टियों के अवलोकन से पता चला कि वह अपने पूरे सेवा जीवन में एक औसत अधिकारी बने रहे और कभी सुधार नहीं कर सके-उनकी बारी खराब थी-'-उन्हें की ईमानदारी और प्रतिष्ठा के बारे में प्रतिकूल प्रविष्टियां दी गईं-अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं- झारखंड सिविल सेवा संहिता-आर 74 (बी)(ii).

पूर्ववर्ती: निर्णयों के बीच संघर्ष-आयोजित: सी बड़ी पीठ के निर्णय का पालन किया जाना है। राहत- निर्णित अदालत द्वारा विशेष रूप से नहीं मांगी गई राहत नहीं दी जा सकती है याचिकाकर्ता एक न्यायिक अधिकारी था। वर्ष 1996-97 से 2001-2002 के लिए उनके एसीआर में उनके खिलाफ कुछ प्रतिकूल टिप्पणियां की गई थीं। अक्टूबर, 2001 में पदोन्नति के लिए उनके नाम की सिफारिश की गई और उन्हें तदर्थ आधार पर अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया गया।

12.05.2003 को, याचिकाकर्ता सहित छह न्यायिक अधिकारियों की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश झारखंड सिविल सेवा संहिता के नियम 74 (बी) (ii) के प्रावधान को लागू करते हुए सार्वजनिक हित में जारी किया गया था। तत्काल रिट याचिका अनिवार्य सेवानिवृत्ति के उक्त आदेश को चुनौती देते हुए दायर की गई थी।

रिट याचिका को खारिज करते हुए, न्यायालय ने निर्णित किया 1. अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश कोई सजा नहीं है और यह तब तक कलंक का संकेत नहीं देता है जब तक कि इस तरह के आदेश को वैधानिक नियमों में निर्धारित एक सिद्ध जी कदाचार के लिए सजा देने के लिए पारित नहीं किया जाता है। प्राधिकरण को संबंधित अधिकारी की प्रविष्टियों के समग्र प्रभाव पर विचार करना चाहिए और जांच करनी चाहिए, न कि एक अलग प्रविष्टि, जैसा कि कुछ मामलों में एच 218 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2010] 11 एस सि आर् के बावजूद हो सकता है।

एक संतोषजनक निष्पादन, प्राधिकरण लोक हित में एक कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने की इच्छा रख सकता है, यदि उक्त प्राधिकरण की राय में, पद को अधिक कुशल और गतिशील व्यक्ति द्वारा संचालित किया जाना है और यदि अभिलेख पर यह दिखाने के लिए पर्याप्त सामग्री है कि कर्मचारी ने "संस्था के लिए खुद को दायित्व प्रदान किया है", तो न्यायालय के लिए न्यायिक समीक्षा की अपनी सीमित शक्ति के प्रयोग में हस्तक्षेप करने का कोई अवसर नहीं है। [पैरा 18) [231-ई-जी] बैकुंता नाथ दास और अन्य। बनाम मुख्य जिला चिकित्सा अधिकारी, बारीपदा और अन्न। ए. आई. आर. 1992 एस. सी. 1020; पद और सी. टेलीग्राफ बोर्ड और अन्य। बनाम. C.S.N. मूर्ति ए. आई. आर. 1992 एस. सी. 1368; सुखदेव बनाम आयुक्त अमरावती प्रभाग, अमरावती और अन्न। (1996) एस सि सि 103; आइ के मिश्रा बनाम भारत संघ और अन्य। ए आइ आर् 1997 एस ओ 3740; M.S. बिंद्रा बनाम भारत संघ और अन्य। एआईआर 1998 एससी 3058; रजत बरन रॉय और अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य। ए. आई. आर. 1999 एससी 1661; गुजरात राज्य और ए. एन. आर. बनाम सूर्यकांत चुनीलाल शाह (1991) 1 एससीसी 529; यूपी राज्य। अन्य बनाम बिहारी लाल एआइआर् 1995 एस सि 1161; उत्तर प्रदेश राज्य। ओर अन्य बनाम विजय कुमार जैन एआइआर् 2002 एस सि 1345; जुगल चंद्र सैकिया बनाम असम राज्य और अन्य ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 1962; नवल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य। और अन्य एआइआर् 2003 एस सि 4303; चंद्र सिंह और अन्य। बनाम राजस्थान राज्य और अन्न। ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 2889; शिव दयाल गुप्ता बनाम राजस्थान राज्य और अन्न। (2005) 13 एस. सी. सी. 581; एम. पी. राज्य सहकारी डेयरी फेडरेशन लिमिटेड और ए. एन. आर. बनाम रजनीश कुमार जर्मीदार और अन्य। (2009) 15 एस. सी. सी. 221; एफ. सुरेंद्र कुमार बनाम भारत संघ और अन्य। (2010) 1 एससीसी 158, पर भरोसा किया।

2. पंजाब राज्य में, इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि सरकारी कर्मचारी की एसीआर में बेईमानी और जी अक्षमता के संबंध में प्रतिकूल प्रविष्टियों को नजरअंदाज किया जाना चाहिए, यदि उसी की रिकॉर्डिंग के बाद, उसे दक्षता सीमा को पार करने की अनुमति दी गई थी, क्योंकि इसका अर्थ यह होगा कि उसे दक्षता सीमा को पार करने की अनुमति देते समय ऐसी प्रविष्टियों पर विचार किया गया था और एच प्यारे मोहन लाल बनाम झारखंड राज्य और 219 अन्य के उद्देश्य के लिए गंभीर प्रकृति की नहीं पाई गई थी। दक्षता बार को पार करना। यह दृष्टिकोण 'ए वॉश ऑफ थ्योरी' पर आधारित

था। हालांकि, उड़ीसा राज्य में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने एक अलग दृष्टिकोण रखते हुए कहा कि ऐसी प्रविष्टियां अभी भी एक सरकारी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने के लिए समग्र विचार के लिए रिकॉर्ड का हिस्सा बनी हुई हैं। उद्देश्य हमेशा जनहित होता है।

इसलिए, इस तरह की प्रविष्टियां महत्व नहीं खोती हैं, भले ही कर्मचारी को बाद में पदोन्नत किया गया हो। इस न्यायालय के दो या दो से अधिक निर्णयों के बीच टकराव के मामले में, बड़ी पीठ के फैसले का पालन किया जाना है। इसके अलावा, धोए गए सिद्धांत का सार्वभौमिक सी अनुप्रयोग नहीं है। आगे की पदोन्नति के लिए सरकारी कर्मचारी के मामले पर विचार करते समय इसकी प्रासंगिकता हो सकती है, लेकिन ऐसे मामले में नहीं जहां कर्मचारी का मूल्यांकन समीक्षा प्राधिकरण द्वारा यह निर्धारित करने के लिए किया जा रहा है कि क्या वह सेवा में बनाए रखने के लिए उपयुक्त है या उसे अनिवार्य सेवानिवृत्ति दिए जाने की आवश्यकता है, क्योंकि प्राधिकरण को उसके "संपूर्ण सेवा रिकॉर्ड" को ध्यान में रखते हुए उसकी उपयुक्तता का आकलन करना है।

[पैरा 19, 21, 26] [232-ए-बी; जी-एच; 233-ए; 235-बी-सी]

* * उड़ीसा राज्य और अन्य। बनाम रामचंद्र दास AIR 1996 SC 2436; गुजरात राज्य बनाम उमेदभाई एम. पटेल ए. आई. आर. 2001 इ एस सि 1109; उत्तर प्रदेश राज्य। वी. राम चंद्र त्रिवेदी ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 2547; श्रीमती. त्रिवेणीबेन बनाम गुजरात राज्य ए. आई. आर. 1989 एस. सी. 1335 पर भरोसा किया। पंजाब राज्य बनाम दीवान चुनी लाल ए. आई. आर. 1970 एस. सी. 2086; एफ. बैद्यनाथ महापात्रा बनाम उड़ीसा राज्य और अन्य। ए. आई. आर. 1989 एस. सी. 2218, संदर्भित।

3. याचिकाकर्ता के पिछले वर्षों के एसीआर में कुछ प्रविष्टियों के अवलोकन से पता चला कि याचिकाकर्ता अपने जी सेवा कार्यकाल के दौरान एक औसत अधिकारी बना रहा और कभी भी सुधार नहीं कर सका। वर्ष 1999-2000 में उनकी सत्यनिष्ठा/प्रतिष्ठा के बारे में प्रतिकूल प्रविष्टियां दी गई थीं और 1997 और 2001-2002 में निरीक्षण करने वाले न्यायाधीशों द्वारा इस संबंध में टिप्पणी की गई थी। याचिकाकर्ता ने एक गंजा दावा किया एच 220 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [201 ओ जे 11 एस सि आर कि प्रतिकूल प्रविष्टियों को अभी तक उसे सूचित नहीं किया गया था। निर्विवाद रूप से, अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए एक अधिकारी का आकलन करने के उद्देश्य से असंबद्ध प्रतिकूल प्रविष्टियों को ध्यान में रखा जा सकता है। याचिकाकर्ता ने यह खुलासा नहीं किया कि उसके द्वारा बी प्रतिकूल प्रविष्टियों के खिलाफ अभ्यावेदन किस तारीख को किए गए थे। उन्होंने उक्त प्रतिकूल प्रविष्टियों को चुनौती नहीं दी, बल्कि उन्होंने केवल अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को चुनौती देना उचित समझा, जो ऐसी प्रतिकूल प्रविष्टियों का परिणामी प्रभाव था। कानून प्राधिकरण से यह आकलन करते समय कर्मचारी के "संपूर्ण सेवा रिकॉर्ड" पर विचार करने की अपेक्षा करता है कि क्या उसे अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी जा सकती है, इस तथ्य के बावजूद कि प्रतिकूल प्रविष्टियों के बारे में उसे सूचित नहीं किया गया था और उन प्रतिकूल प्रविष्टियों के बावजूद अधिकारी को पहले पदोन्नत किया गया था। उससे भी अधिक, सुदूर अतीत में भी एक अधिकारी की सत्यनिष्ठा के संबंध में एक प्रतिकूल प्रविष्टि अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने के लिए पर्याप्त है। न्यायिक अधिकारी के मामले की जांच की आवश्यकता होती है, जो एच. आई. एल. जे. आई. को समाज के अन्य अंगों से अलग मानता है, क्योंकि वह एक अलग क्षमता में राज्य की सेवा कर रहा है। न्यायिक अधिकारी के मामले पर मुख्य न्यायाधीश द्वारा विधिवत गठित उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की समिति द्वारा

विचार किया जाता है और फिर समिति की रिपोर्ट को पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखा जाता है। पूर्ण न्यायालय द्वारा मामले पर उचित विचार-विमर्श के बाद निर्णय लिया जाता है। इसलिए, मन के गैर-अनुप्रयोग या असदभाव के आरोप लगाने का शायद ही कोई मौका है। [पैरा 28, 29] [235-ई; 236-जी-एच; 237-ए-एफ]

4. याचिकाकर्ता के सेवा पुस्त से पता चला कि उन्हें जिला न्यायाधीश के नियमित संवर्ग में पदोन्नत नहीं किया गया था क्योंकि प्रतिकूल प्रविष्टियों के कारण उन्हें इसके लिए उपयुक्त नहीं पाया गया था। याचिकाकर्ता को तदर्थ आधार पर अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के रूप में पदोन्नत किया गया और फास्ट ट्रैक कोर्ट में तैनात किया गया। यह निश्चित रूप से योग्यता के आधार पर पदोन्नति नहीं थी (चयन). उच्च न्यायालय एच ने निष्पक्ष रूप से उनके अनिवार्य प्यारे मोहन लाल बनाम झारखंड राज्य और 221 अन्य की सिफारिश करने का निर्णय लिया। सेवानिवृत्ति और राज्य प्राधिकरणों ने तदनुसार कार्य किया। निर्णय लेने की प्रक्रिया या निर्णय में कोई गलती नहीं पाई जा सकती है। न्यायिक आयुक्त द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के साथ याचिकाकर्ता का मूल सेवा पुस्त इस न्यायालय के समक्ष रखा गया था, जिसने बड़ी संख्या में तथ्यों बी को ध्यान में रखने के बाद दर्ज किया कि याचिकाकर्ता की सामान्य प्रतिष्ठा अच्छी नहीं थी, लेकिन किसी ने भी उसकी सामान्य प्रतिष्ठा के खिलाफ किसी विशिष्ट मामले के साथ संपर्क नहीं किया था। [पैरा 30, 31] [237-जी-एच; 238-ए-एफ]

5. याचिकाकर्ता के तर्क में कोई तथ्यात्मक आधार नहीं था कि प्रतिकूल प्रविष्टियां प्रामाणिक तरीके से और परिपत्रों आदि द्वारा निर्धारित आवश्यकता के अनुसार नहीं की गई थीं, और इसलिए, अनिवार्य सेवानिवृत्ति का परिणामी आदेश अवैध था। याचिकाकर्ता ने अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को रद्द करने और प्रतिकूल प्रविष्टियों को रद्द नहीं करने की मांग की थी। अदालत द्वारा विशेष रूप से नहीं मांगी गई राहत नहीं दी जा सकती है।

इसलिए, इस मुद्दे की आगे जांच करने का कोई अवसर नहीं था। उसी को ध्यान में रखते हुए, विवादित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई ठोस कारण नहीं था। [पैरा 32, 33] [238-ई जी-एच; 239-ए-बी] बलदेव राज चड्ढा बनाम भारत संघ और अन्य। ए. आई. आर. 1981 एस. सी. 70 पर भरोसा किया गया। मामला कानून संदर्भ:

एआइआर 1992 एससि 1020 ने पारस 8, 20 एआइआर 1992 एससि 1368 ने पैरा 9 पर भरोसा किया (1996) 5 सेकण्ड 103 पैरा 9 एआईआर 1997 एससी 3740 पैरा 9 एआईआर 1998 एससी 3058 पैरा 9 एआईआर 1999 एससी 1661 पैरा 9 एफजीएच 222 पर निर्भर सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2010] 11 एससिआर (1999)1 धारा 529 पैरा 10 एआईआर 1995 एससी 1161 पैरा 11 एआईआर 2002 एससी 1345 पैरा 12, 16, 23 बी पर निर्भर ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 1362 पैरा 13 ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 4303 पैरा 14 ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 2889 पैरा 15 सी. (2005) 13 धारा 581 पैरा 16 पर निर्भर है (2009) 15 सेक 221 पैरा 17 पर निर्भर (201 ओ) 1 धारा 158 पैरा 17 डी एआईआर 1970 एससी 2086 पैरा 19 एआईआर 1989 एससी 2218 पैरा 20 एआईआर 1996 एससी 2436 पैरा 21 एआईआर 2001 एससी 1109 पैरा 22 ई पर निर्भर ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 2547 पैरा 24 पर निर्भर था ए. आई. आर. 1989 एस. सी. 1335 पैरा 25 पर निर्भर था ए. आई. आर. 1981 एस. सी. 70 पैरा 32 एफ पर निर्भर था सिविल मूल न्यायनिर्णय: रिट

याचिका (सिविल) नं. 2003 का 382. सुनील कुमार, C.K. याचिकाकर्ता के लिए सुचरिता।
G अशोक माथुर उत्तरदाताओं की ओर से अनिल के. झा, संतोष कुमार।
निर्णय

डॉ. बी. एस. चौहान, जे. के द्वारा घोषित किया गया

1- यह रिट याचिका झारखंड राज्य द्वारा पारित दिनांक 20.05.2023 आदेश के खिलाफ दायर की गई है-
प्रतिवादी संख्या 2, याचिकाकर्ता, झारखंड राज्य के एक न्यायिक अधिकारी को अनिवार्य सेवानिवृत्ति देते
हुए झारखंड उच्च न्यायालय की सिफारिश पर-प्रशासनिक पक्ष पर प्रतिवादी संख्या 3।

2. इस मामले को जन्म देने वाले तथ्य और परिस्थितियाँ यह हैं कि याचिकाकर्ता को 1982 में बिहार
सिविल सेवा न्यायिक शाखा में चुना गया था और राज्य द्वारा मुन्सिफ के पद पर नियुक्त किया
गया था और 11 मार्च 1987 के आदेश द्वारा मुन्सिफ के ग्रेड में पुष्टि की गई थी। उन्हें 23
सितंबर, 1994 के आदेश के अनुसार बिहार न्यायिक सेवा के मुन्सिफ कैडर में जूनियर चयन ग्रेड
पद पर पदोन्नत किया गया था। पटना उच्च न्यायालय ने 10 मार्च 2010 को अधिसूचना जारी कर
याचिकाकर्ता को अवर न्यायाधीश के पद पर पदोन्नत किया।

3. बिहार राज्य के विभाजन और झारखंड राज्य के गठन के परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता की सेवाओं
को 28 मार्च 2001 को कार्मिक लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय कार्मिक और प्रशिक्षण विभागद्वारा
नई दिल्ली के आदेश द्वारा झारखंड राज्य को आवंटित किया गया था। याचिकाकर्ता को झारखंड
उच्च न्यायालय द्वारा जारी 21 अप्रैल 2001 की अधिसूचना के माध्यम से अवर न्यायाधीश रांची के
रूप में नियुक्त किया गया था और बाद में याचिकाकर्ता को 1 अगस्त 2001 के आदेश के अनुसार
विधि विभाग में अवर सचिव.सह.उप. विधि सचिव और विधि अधिकारी के रूप में झारखंड राज्य के
निपटान में रखा गया था।

4. झारखंड के उच्च न्यायालय ने अतिरिक्त पद पर पदोन्नति के लिए अन्य लोगों के साथ याचिकाकर्ता
के नाम की सिफारिश की। 21 अक्टूबर, 2001 के पत्र के माध्यम से तदर्थ आधार पर जिला न्यायाधीश।
याचिकाकर्ता को तदर्थ आधार पर अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक) के रूप में नियुक्त
किया गया था और 14 दिसंबर, 2001 के आदेश के अनुसार रांची में तैनात किया गया था। झारखंड उच्च
न्यायालय ने प्रशासनिक पक्ष की ओर से 12 मई, 2003 के आदेश के माध्यम से याचिकाकर्ता सहित छह
न्यायिक अधिकारियों की अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सिफारिश की और उसके अनुसरण में, प्रतिवादी संख्या
2 ने पांच अन्य न्यायिक अधिकारियों के साथ झारखंड सिविल सेवा संहिता (जिसे इसके बाद संहिता कहा
जाता है) के नियम 74 (बी) (ii) के प्रावधानों को लागू करते हुए जनहित में 20 मई, 2003 को
याचिकाकर्ता की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का एक परिणामी आदेश जारी किया। इसलिए, यह रिट याचिका।

5. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सुनील कुमार ने प्रस्तुत किया है कि
याचिकाकर्ता का बेदाग सेवा रिकॉर्ड था और उसके खिलाफ कोई प्रतिकूल प्रविष्टि नहीं थी और उसे
अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक) के पद पर भी पदोन्नत किया गया था, इस प्रकार
प्रतिकूल प्रविष्टियाँ, यदि कोई हों, तो उसे प्रतिकूल समझा जाए क्योंकि वे उनकी पदोन्नति की तारीख
से पहले की थीं। प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा पारित अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश मनमाना, अनुचित और
अनाधिकृत है। प्रतिकूल प्रविष्टियाँ जिनके आधार पर याचिकाकर्ता को अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी गई

थी याचिकाकर्ता को सूचित किया गया। उक्त प्रतिकूल प्रविष्टियों के खिलाफ याचिकाकर्ता द्वारा किए गए अभ्यावेदन का आज तक निपटारा नहीं किया गया है। जहाँ तक याचिकाकर्ता का संबंध है, अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को जनहित में नहीं माना जा सकता है; झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा किए गए निष्कर्ष का समर्थन करने के लिए कोई सामग्री नहीं थी। उच्च न्यायालय द्वारा की गई सिफारिश अनुचित और मनमाना है। आक्षेपित आदेश । संहिता का नियम 74 (बी) (ii) सक्षम अधिकारियों को केवल उन कर्मचारियों की सेवाओं से छुटकारा कलंकित करता है पाने और उन्हें समाप्त करने का अधिकार देता है, जिन्होंने अपनी उपयोगिता खो दी है, बेकार हो गए हैं और जिनकी सेवा में आगे बने रहना जनहित में नहीं है। प्रत्यर्थियों के लिए इस तरह के आदेश को सही ठहराने के लिए किसी भी सामग्री के अभाव में याचिकाकर्ता की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पारित करने का कोई अवसर नहीं था। इस प्रकार, आक्षेपित आदेश को अवैध और अमान्य माना जा सकता है। याचिका की अनुमति दी जानी चाहिए।

6. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों की ओर से पेश हुए विद्वान वकील श्री अशोक माथुर और श्री अनिल कुमार झा ने याचिका का जोरदार विरोध करते हुए कहा कि याचिकाकर्ता के खिलाफ बड़ी संख्या में प्रतिकूल प्रविष्टियां की गई थीं और उक्त प्रविष्टियों को हटाया नहीं गया था; उनका व्ययन बहुत कम था; उनकी प्रतिष्ठा अच्छी नहीं थी क्योंकि उनकी ईमानदारी से संबंधित कई प्रविष्टियां संदिग्ध थीं। रिकॉर्ड किया गया था। इस प्रकार, वह न्यायिक सेवा में बने रहने के लिए खुद को योग्य होने का दावा नहीं कर सके। याचिका में योग्यता का अभाव है और इसे खारिज किया जा सकता है।

7. हमने पक्षों के विद्वान वकील द्वारा की गई प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार किया है और अभिलेख का अध्ययन किया है।

9. समूह सेवानिवृत्ति बैकुंता नाथ दास और अन्य । बनाम मुख्य जिला चिकित्सा अधिकारी, बारीपदा और अन्न।, ए. आई. आर. 1992 एस. सी. 1020 में, इस न्यायालय ने न्यायालयों के लिए कुछ मानदंड निर्धारित किए हैं, जिन पर वह अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश में हस्तक्षेप कर सकता है और उनमें दुर्भावना शामिल है, यदि आदेश किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, या यदि आदेश इस अर्थ में मनमाना है कि कोई भी उचित व्यक्ति दी गई सामग्री पर अपेक्षित राय नहीं बनाएगा, यानी यदि यह एक विकृत आदेश पाया जाता है। न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया: -

"(i) अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश कोई दंड नहीं है। इसका मतलब कोई कलंक नहीं है और न ही दुर्व्यवहार का कोई सुझाव है।

((ii) सरकार द्वारा यह राय बनाने पर आदेश पारित किया जाना चाहिए कि किसी सरकारी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करना जनहित में है। यह आदेश सरकार की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर पारित किया जाता है।

((iii) अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश के संदर्भ में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का कोई स्थान नहीं है। इसका मतलब यह नहीं है कि न्यायिक जांच को पूरी तरह से बाहर रखा गया है। यद्यपि उच्च न्यायालय या न्यायालय एक अपीलीय न्यायालय के रूप में मामले की जांच नहीं करेगा, वे हस्तक्षेप कर सकते हैं यदि वे संतुष्ट हैं कि आदेश पारित किया गया है (क) दुर्भावनापूर्ण या (ख) यह किसी साक्ष्य पर आधारित

नहीं है या (ग) यह मनमाना है-इस अर्थ में कि कोई भी उचित व्यक्ति दी गई सामग्री पर अपेक्षित राय नहीं बनाएगा: संक्षेप में, यदि यह एक विकृत आदेश पाया जाता है।

(iv) सरकार (या समीक्षा समिति, जैसा भी मामला हो) को मामले में निर्णय लेने से पहले सेवा के पूरे रिकॉर्ड पर विचार करना होगा-निश्चित रूप से बाद के वर्षों के दौरान अभिलेख और प्रदर्शन को अधिक महत्व देना होगा। इस तरह से विचार किए जाने वाले अभिलेख में स्वाभाविक रूप से गोपनीय अभिलेख/चरित्र सूची में प्रविष्टियां शामिल होंगी, अनुकूल और प्रतिकूल दोनों। यदि प्रतिकूल टिप्पणियों के बावजूद किसी सरकारी कर्मचारी को उच्च पद पर पदोन्नत किया जाता है, तो इस तरह की टिप्पणियों का प्रभाव कम हो जाता है, विशेष रूप से यदि पदोन्नति योग्यता (चयन) पर आधारित है न कि वरिष्ठता पर।

(v) अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश केवल यह दिखाने पर कि इसे पारित करते समय असंयुक्त प्रतिकूल टिप्पणियों को भी ध्यान में रखा गया था, न्यायालय द्वारा विखण्डित करने के लिए उत्तरदायी नहीं है। वह परिस्थिति अपने आप में हस्तक्षेप का आधार नहीं हो सकती। (जोर दिया गया)।

9. इस न्यायालय द्वारा इसी तरह के विचार को दोहराया गया हैडाक और टेलीग्राफ बोर्ड और अन्य। बनाम। सी एस एन मूर्ति, ए. आई. आर. 1992 एससी 1368;

सुखदेव बनाम आयुक्त अमरावती प्रभाग, अमरावती और अन्य। (1996) 5 एससीसी 103;आई. के. मिश्रा बनाम भारत संघ और अन्य।, ए आइ आर 1997 एस सि 13740;एम एस बिंद्रा बनाम भारत संघ और अन्य।, ए. आई. आर. 1998 एस. सी. 3058; औररजत बरन रॉय और अन्य। बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य।, ए. आई. आर 1999 एस. सी. 1661 इस न्यायालय ने पर्यवेक्षण किया कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के मामले में न्यायिक समीक्षा की गुंजाइश बहुत सीमित है और यह केवल मन का उपयोग न करने, दुर्भावनापूर्ण होने या भौतिक विवरणों की कमी के आधार पर ही स्वीकार्य है। सेवा नियमों के संदर्भ में एक सरकारी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने की शक्ति निरपेक्ष है, बशर्ते कि संबंधित प्राधिकारी एक प्रामाणिक राय बनाते हैं कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति सार्वजनिक हित में है।

10 गुजरात राज्य और अन्न। बनाम सूर्यकांत चुनिलाल शाह, (1999) 1 एस. सी. सी. 529, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए एक कर्मचारी के मामले पर विचार करते समय, जनहित सर्वोपरि महत्व का है। बेईमान, भ्रष्ट और मृत लकड़ी को हटा दिया जाना चाहिए। एक कर्मचारी कितना कुशल और ईमानदार है, इसका मूल्यांकन अभिलेख पर सामग्री के आधार पर किया जाना है, जिसका पता गोपनीय रिपोर्टों से भी लगाया जा सकता है। हालांकि, कर्मचारी के खिलाफ कुछ ठोस सामग्री होनी चाहिए जो उसकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति की गारंटी देती है।

11. उत्तर प्रदेश और उत्तर प्रदेश का राज्य बनाम। बिहारी लाल, ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 1161, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि किसी कर्मचारी की सामान्य प्रतिष्ठा अच्छी नहीं है, हालांकि उसके खिलाफ कोई ठोस सामग्री नहीं हो सकती है, तो उसे जनहित में अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी जा सकती है और ऐसे आदेश की न्यायिक समीक्षा की अनुमति केवल सीमित आधारों पर है। द.अदालत ने आगे कहा अभिनिर्धारित किया

".....जिस पर गौर करने की आवश्यकता है, वह है सार्वजनिक सेवा में दक्षता बढ़ाने के लिए जनहित में लिया गया प्रामाणिक निर्णय।

12. यू. पी. और अन्य का राज्य। बनाम। विजय कुमार जैन, ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 1345, इस न्यायालय ने इस मुद्दे पर विचार करते हुए निम्नलिखित टिप्पणी की:

"सरकारी कर्मचारी की ईमानदारी को रोकना एक गंभीर मामला है। वर्तमान मामले में, हम जो पाते हैं वह यह है कि प्रतिवादी की सत्यनिष्ठा को दिनांकित 13.06.1997 के आदेश द्वारा रोक दिया गया था और प्रतिवादी की चरित्र सूची में उक्त प्रविष्टि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश के पारित होने के दस वर्षों के भीतर अच्छी तरह से थी। उच्च न्यायालय में रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, उत्तर प्रदेश सेवा न्यायाधिकरण ने प्रतिवादी द्वारा दायर एक दावा याचिका पर प्रविष्टि को 1997-98 से 1983-84 में स्थानांतरित कर दिया। उक्त प्रविष्टि को एक अलग अवधि में स्थानांतरित करने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश के पारित होने के दस साल से आगे जाने का मतलब यह नहीं है कि प्रतिकूल प्रविष्टि का जोश और डंक खो जाता है। प्रतिकूल प्रविष्टि की तीव्रता या डंक को मिटा नहीं दिया जाता है, केवल यह अनिवार्य आदेश के पारित होने के 11वें या 12वें वर्ष से संबंधित है। सेवानिवृत्ति। उपर्युक्त प्रतिकूल प्रविष्टि, जिसे प्रतिवादी की सेवा से अनिवार्य सेवानिवृत्ति के मामले पर विचार करते समय ध्यान में रखा जा सकता था, पर राज्य सरकार द्वारा विधिवत विचार किया गया था और उक्त एकल प्रतिकूल प्रविष्टि अपने आप में प्रतिवादी को सेवा से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने के लिए पर्याप्त थी। इसलिए, हमारा विचार है कि किसी सरकारी कर्मचारी की अनिवार्य सेवानिवृत्ति के मामले पर विचार करते समय चरित्र सूची में बाद की प्रविष्टियों पर जोर देने के साथ संपूर्ण सेवा रिकॉर्ड या गोपनीय रिपोर्ट को सरकार द्वारा ध्यान में रखा जा सकता है। (जोर दिया गया)

13. जुगल चंद्र सैकिया बनाम असम राज्य और अन्न।, ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 1362, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जहां जांच समिति में राज्य के जिम्मेदार अधिकारी शामिल हैं और उन्होंने पूरे सेवा रिकॉर्ड की जांच/मूल्यांकन किया है और निष्पक्ष रूप से राय बनाई है कि क्या कोई कर्मचारी सेवा में बनाए रखने के लिए योग्य है या नहीं, दुर्भावना के किसी भी आरोप के अभाव में, ऐसे आदेश के खिलाफ न्यायिक समीक्षा की कोई गुंजाइश नहीं है।

14. नवल सिंह बनाम। उत्तर प्रदेश और उत्तर प्रदेश का राज्य, ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 4303 में भी इसी तरह के विचार को दोहराया गया है। न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की:

"शुरुआत में, यह दोहराया जाना चाहिए कि न्यायिक सेवा रोजगार के अर्थ में सेवा नहीं है। न्यायाधीश संप्रभु न्यायिक का प्रयोग करते हुए अपने कार्यों का निर्वहन कर रहे हैं। राज्य की शक्ति। उनकी ईमानदारी और सत्यनिष्ठा संदेह से परे होने की उम्मीद है। यह उनकी समग्र प्रतिष्ठा में परिलक्षित होना चाहिए। इसके अलावा, न्यायिक सेवा की प्रकृति ऐसी है कि वह संदिग्ध सत्यनिष्ठा वाले या अपनी उपयोगिता खो चुके व्यक्तियों की सेवा में निरंतरता को सहन नहीं कर सकती है। यदि ऐसा मूल्यांकन उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की समिति द्वारा किया जाता है और बहुत ही असाधारण परिस्थितियों को छोड़कर, रिट याचिका में इसकी पुष्टि की जाती है, तो यह न्यायालय इसमें हस्तक्षेप नहीं करेगा, विशेष रूप से क्योंकि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश प्राधिकरण की व्यक्तिपरक संतुष्टि पर आधारित है।

.....इसके अलावा, न्यायिक अधिकारी की सत्यनिष्ठा पर संदेह करने के लिए सकारात्मक साक्ष्य द्वारा आधार साबित करना असंभव है। वर्तमान प्रणाली में, उच्च अधिकारी की राय पर निर्भरता रखने की आवश्यकता है, जिसे संबंधित अधिकारी के प्रदर्शन को करीब से देखने का अवसर मिला था और संबंधित

अधिकारी द्वारा प्राप्त समग्र प्रतिष्ठा के संबंध में अपनी राय बनाना आधार होगा.. निचली न्यायपालिका न्यायिक प्रणाली की नींव है। हम आशा करते हैं कि उच्च न्यायालय मृत लकड़ी या न्याय वितरण प्रणाली को प्रदूषित करने वाले व्यक्तियों को हटाने के लिए नियमित रूप से उचित कदम उठाएंगे।

15. चंद्र सिंह और ओआरएस में। बनाम राजस्थान राज्य और ए. एन. आर., ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 2889, यह न्यायालय अभिलेख पर पूरे साक्ष्य की जांच करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उसमें अपीलार्थी, एक न्यायिक अधिकारी, चंद्र सिंह को दी गई अनिवार्य सेवानिवृत्ति कानून के अनुरूप नहीं थी। हालांकि, रिपोर्ट पर विचार करते हुए समिति और उनके खिलाफ की गई प्रतिकूल टिप्पणियों पर ध्यान देते हुए, अदालत ने उन्हें कोई राहत देने से इनकार कर दिया। फैसले का प्रासंगिक हिस्सा इस प्रकार है:

"यह दोहराया जाएगा कि पेंशन नियमों के नियम 53 के संदर्भ में, अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश केवल तभी पारित किया जा सकता है जब वह जनहित में हो और/या उसके बदले में तीन महीने का नोटिस या तीन महीने का वेतन दिया गया हो। उपर्युक्त शर्तों में से किसी का भी पालन नहीं किया गया था। इसलिए, हमारे पास यह मानने के अलावा कोई विकल्प नहीं है कि उच्च न्यायालय या राज्य की ओर से अपीलार्थियों को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने की कार्रवाई अवैध थी।

अनुच्छेद 235 भारत के संविधान की धारा उच्च न्यायालय को किसी भी समय किसी भी न्यायिक अधिकारी के प्रदर्शन का आकलन करने में सक्षम बनाती है ताकि काले भेड़ को अनुशासित किया जा सके या मृत लकड़ी को निकाला जा सके। उच्च न्यायालय की इस संवैधानिक शक्ति को किसी भी नियम या आदेश द्वारा सीमित नहीं किया जा सकता है। हम उपयोगी रूप से कुछ प्रमुख मामलों का उल्लेख कर सकते हैं अनुच्छेद 235:

1. असम राज्य बनाम रंगा मोहम्मद, ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 903 (पाँच न्यायाधीश)
2. समशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य, ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 2192 (सात न्यायाधीश)
3. बॉम्बे में उच्च न्यायालय बनाम

शिरीषकुमार रंगराव पाटिल, ए. आई. आर 1997 एस. सी. 2631।

तत्काल मामले में, हम उच्च न्यायिक अधिकारियों के साथ काम कर रहे हैं। हम तीन न्यायाधीशों की समिति द्वारा की गई टिप्पणियों पर पहले ही ध्यान दे चुके हैं। न्यायिक सेवा की प्रकृति ऐसी है कि यह संदिग्ध सत्यनिष्ठा वाले व्यक्तियों या जिन्होंने अपनी उपयोगिता खो दी है, उनकी सेवा में निरंतरता को सहन नहीं कर सकता है।

16. में।शिव दयाल गुप्ता बनाम राजस्थान राज्य और अन्न।, (2005) 13 एस. सी. सी. 581, इस न्यायालय ने एक न्यायिक अधिकारी की अनिवार्य सेवानिवृत्ति के मामले की जांच की और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि समीक्षा समिति ने उक्त अधिकारी के पूरे सेवा रिकॉर्ड पर विचार करते हुए एक समग्र मूल्यांकन किया था और इस निष्कर्ष पर पहुंची कि उक्त अधिकारी का सेवा में बने रहना विभाग के लिए एक दायित्व और लोक हित के लिए प्रतिकूल होगा क्योंकि उनके ए. सी. आर. से पता चलता है कि वह निर्णय लिखने में कमजोर थे और उन्हें इसमें सुधार करने की सलाह दी गई थी। उनका न्यायिक कार्य असंतोषजनक पाया गया और उन्हें इसमें सुधार करने की सलाह दी गई। वर्ष 1983 में उनकी सत्यनिष्ठा संदिग्ध पाई गई थी। इससे पहले 1983 में पदोन्नति के लिए विचार किए जाने के दौरान उन्हें हटा दिया गया था और 1993 में उन्हें एक प्रतिकूल प्रविष्टि दी गई थी कि वे अधीनस्थ कर्मचारियों और वकीलों में विश्वास पैदा करने में

विफल रहे और उनके निपटान की दर कम थी। उपरोक्त प्रतिकूल प्रविष्टियों के आधार पर, उन्हें 09.11.2000 दिनांकित आदेश के माध्यम से अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी गई थी। इस न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए उक्त आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया कि वह दुर्भावना के उचित आरोप नहीं लगा सके या यह स्थापित करें कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश बिना दिमाग के लागू किए पारित किया गया था। उक्त मामले का निर्णय करते समय, न्यायालय ने उस पर निर्भरता रखें इस न्यायालय के निर्णय में विजय कुमार जैन (ऊपर)।

17. में। एम. पी. राज्य सहकारी डेयरी फेडरेशन लिमिटेड और ए. एन. आर. बनाम। रजनीश कुमार जर्मोदार और अन्य।, (2009) 15 एस. सी. सी. 221, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश की न्यायिक समीक्षा की अनुमति है यदि आदेश विकृत या मनमाना है, और साथ ही जहां वैधानिक प्राधिकरण द्वारा वैधानिक कर्तव्य का पालन नहीं किया जाता है, लेकिन न्यायालय को तथ्यात्मक निष्कर्षों में नहीं जाना चाहिए। अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को पारित करने के लिए जिम्मेदार नहीं होने वाले कारकों को ध्यान में नहीं रखा जाना चाहिए। नियोक्ता द्वारा अपनाए गए मानदंडों और नियमों का पालन किया जाना चाहिए, यह निर्धारित करने के लिए कि कर्मचारी अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए उत्तरदायी हो गया था या नहीं। सार्वजनिक कार्य का निर्वहन करने वाले प्राधिकरण को निष्पक्ष रूप से कार्य करना चाहिए।

18. इस प्रकार, इस मुद्दे पर कानून को इस प्रभाव से संक्षेपित किया जा सकता है कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश कोई सजा नहीं है और यह तब तक कलंक का संकेत नहीं देता है जब तक कि ऐसा आदेश किसी सिद्ध कदाचार के लिए सजा देने के लिए पारित नहीं किया जाता है, जैसा कि वैधानिक नियमों में निर्धारित किया गया है। (देखें। सुरेंद्र कुमार बनाम भारत संघ और अन्य।, (2010) 1 एससीसी 158)। प्राधिकरण को संबंधित अधिकारी की प्रविष्टियों के समग्र प्रभाव पर विचार करना चाहिए और जांच करनी चाहिए, न कि एक अलग प्रविष्टि, क्योंकि यह अच्छी तरह से हो सकता है कि कुछ मामलों में संतोषजनक प्रदर्शन के बावजूद, प्राधिकरण सार्वजनिक हित में एक कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने की इच्छा कर सकता है, जैसा कि उक्त प्राधिकरण की राय में, पद को अधिक कुशल और गतिशील व्यक्ति द्वारा संचालित किया जाना चाहिए और यदि रिकॉर्ड पर पर्याप्त सामग्री है जो यह दर्शाती है कि कर्मचारी ने "खुद को संस्थान के लिए दायित्व प्रदान किया है", तो न्यायालय के लिए न्यायिक समीक्षा की अपनी सीमित शक्ति के प्रयोग में हस्तक्षेप करने का कोई अवसर नहीं है।

19. पंजाब राज्य बनाम दीवान चुनी लाल, ए. आई. आर. 1970 एस. सी. 2086, इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि सरकारी कर्मचारी के ए. सी. आर. में बेईमानी और अक्षमता के संबंध में प्रतिकूल प्रविष्टियों को नजरअंदाज किया जाना चाहिए, यदि उसी की रिकॉर्डिंग के बाद, उसे दक्षता सीमा को पार करने की अनुमति दी गई थी, क्योंकि इसका मतलब यह होगा कि उसे दक्षता सीमा को पार करने की अनुमति देते समय ऐसी प्रविष्टियों पर विचार किया गया था और दक्षता सीमा को पार करने के उद्देश्य से गंभीर प्रकृति की नहीं पाई गई थी।

20. इसी तरह, इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ ने बैद्यनाथ महापात्रा बनाम उड़ीसा राज्य और अन्न।, ए. आई. आर. 1989 एस. सी. 2218 ने इस मुद्दे पर इसी तरह का विचार रखते हुए कहा था कि सुदूर अतीत में कर्मचारी को दी गई प्रतिकूल प्रविष्टियों का महत्व इस तथ्य को देखते हुए कम हो गया था

कि उन्हें बाद में उच्च पद पर पदोन्नत किया गया था, क्योंकि पदोन्नति के मामले पर विचार करते समय उनके पास पात्रता और उपयुक्तता पाई गई थी और यदि ऐसी प्रविष्टि पदोन्नति के उद्देश्य से उनके काम और आचरण में कमी नहीं दर्शाती थी, तो यह समझना मुश्किल होगा कि उन्हें अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने के लिए इस तरह के प्रतिकूल प्रविष्टि को सेवा में कैसे दबाया जा सकता है। जब किसी सरकारी कर्मचारी को योग्यता और चयन के आधार पर उच्च पद पर पदोन्नत किया जाता है, तो उसके सेवा रिकॉर्ड में निहित प्रतिकूल प्रविष्टियां अपना महत्व खो देती हैं और पिछले इतिहास के हिस्से के रूप में दर्ज रहती हैं।

यह दृष्टिकोण इस न्यायालय द्वारा अपनाया गया है बैकुंथा नाथ दास (ऊपर)।

21. तथापि, इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने उड़ीसा राज्य और अन्य। बनाम रामचंद्र दास, ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 2436 ने एक अलग दृष्टिकोण अपनाया था क्योंकि इसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसी प्रविष्टियां अभी भी सरकार को सेवानिवृत्त करने के लिए समग्र विचार के लिए रिकॉर्ड का हिस्सा बनी हुई हैं। अनिवार्य रूप से सेवक। उद्देश्य हमेशा जनहित होता है। इसलिए, इस तरह की प्रविष्टियों का महत्व कम नहीं होता है, भले ही कर्मचारी को बाद में पदोन्नत किया गया हो। न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया: -

"केवल इसलिए कि प्रतिकूल प्रविष्टियाँ किए जाने के बाद भी पदोन्नति दी गई है, यह ध्यान देने का आधार नहीं हो सकता है कि सरकारी कर्मचारी की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश नहीं दिया जा सकता है। न्यायाधिकरण की राय के अनुसार साक्ष्य अस्वीकार्य या अप्रासंगिक नहीं हो जाता है। प्रासंगिक बात यह होगी कि क्या रिकॉर्ड की उस स्थिति में एक उचित विवेकपूर्ण व्यक्ति के रूप में सरकार या सक्षम अधिकारी उस निर्णय पर पहुंचेंगे। हम पाते हैं कि पदोन्नति के बाद उसी सामग्री को केवल उसे आगे की पदोन्नति, यदि कोई हो, से वंचित करने के लिए ध्यान में नहीं रखा जा सकता है। लेकिन वह सामग्री निस्संदेह सरकार के लिए उपलब्ध होगी ताकि सरकारी कर्मचारी को सेवा की आवश्यक अवधि या पेंशन के लिए सेवा की योग्य अवधि प्राप्त करने के बाद सेवा में बने रहने की समग्र समीचीनता या आवश्यकता पर विचार किया जा सके। (जोर दिया गया)

22. इस फैसले को इस अदालत द्वारा अनुमोदित और अनुसरण किया गया है गुजरात राज्य बनाम उमेदभाई एम. पटेल, ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 1109, इस बात पर जोर देते हुए कि सरकारी कर्मचारी के "पूरे रिकॉर्ड" की जांच की जानी है।

23. विजय कुमार जैन, (ऊपर), इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि किसी प्रविष्टि की शक्ति या डंक मिट नहीं जाता है, विशेष रूप से, कर्मचारी के मामले पर विचार करते हुए उसे अनिवार्य बनाने के लिए। सेवानिवृत्ति, क्योंकि इसके लिए चरित्र सूची और गोपनीय रिपोर्ट सहित पूरे सेवा रिकॉर्ड की जांच की आवश्यकता होती है। 'प्रतिकूल प्रविष्टि की गंभीरता या डंक को मिटा नहीं दिया जाता है' केवल यह दूरदराज के अतीत से संबंधित है। ईमानदारी की एक प्रतिकूल प्रविष्टि हो सकती है जो सरकारी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने के लिए पर्याप्त हो सकती है। बड़ी पीठों का निर्णय:

24. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रामचंद्र त्रिवेदी, ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 2547 में, इस न्यायालय ने कहा कि यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि ऐसे मामलों में जहां इस न्यायालय की बड़ी और छोटी पीठ

द्वारा व्यक्त किए गए विचारों के बीच कोई टकराव है, न्यायालय बड़ी पीठ द्वारा व्यक्त किए गए विचारों की अवहेलना या उपेक्षा नहीं कर सकता है।

25. श्रीमती. त्रिवेणीबेन बनाम गुजरात राज्य, ए. आई. आर. 1989 एस. सी. 1335, इस न्यायालय ने इस मुद्दे पर विचार किया और निम्नानुसार टिप्पणी की:

".....वर्षों से यह प्रथा रही है कि एक बड़ी बेंच सीधे तौर पर एक छोटी बेंच की शुद्धता पर विचार करती है और यदि आवश्यक हो तो एक छोटी बेंच के दृश्य को रद्द कर देती है। सात विद्वान न्यायाधीशों की एक विशेष पीठ द्वारा हाल ही में लिए गए एक फैसले में इस प्रथा को कानून का एक स्पष्ट नियम माना गया है। ए. आर. अंतुले बनाम आर. एस. नायक, ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 1531, सब्यसाची मुखर्जी, जे. ने बहुमत के लिए बोलते हुए कहा (ए. आई. आर. के पी. 1548 पर):

यह सिद्धांत कि पीठ का आकार चाहे वह दो या तीन या अधिक न्यायाधीशों से बना हो, कोई मायने नहीं रखता, यंग बनाम ब्रिस्टल एयरप्लेन लिमिटेड (1944-2 ऑल ईआर 293) (उपरोक्त) में प्रतिपादित किया गया था और इसके बाद न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी नेजावेद अहमद अब्दुल हमीद पावला बनाम महाराष्ट्र राज्य, (ए. आई. आर. 1985 एस. सी. 331), जहाँ यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दो न्यायाधीशों की एक खंड पीठ का हमारे न्यायालयों द्वारा पालन नहीं किया गया है।

नियमद्वारा निर्धारित यह न्यायालय कुछ अलग है। यहाँ न्यायालय के भीतर ही एक पदानुक्रम है जहाँ बड़ी पीठें छोटी पीठों को खारिज करती हैं। देखें। मट्टूलाल बनाम राधे लाल, ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 1596, भारत संघ बनाम के. एस. सुब्रमण्यन, ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 2433 2437 पर; और उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रामचंद्र त्रिवेदी, ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 2547 पी. 2555 पर। यह इस न्यायालय द्वारा अपनाई जाने वाली प्रथा है और अब यह कानून का एक स्पष्ट नियम है। मैं पूछे गए प्रश्न का उत्तरजावेद अहमद इस प्रकार मामला समाप्त हो गया है और अब यह तर्क देने के लिए किसी के लिए भी खुला नहीं है कि दो न्यायाधीशों की पीठ को तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा खारिज नहीं किया जा सकता है। हमें इसे विवाद की अंतिम मुहर के रूप में मानना चाहिए।

26. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, कानून को संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि यदि इस न्यायालय के दो या दो से अधिक निर्णयों के बीच टकराव होता है, तो बड़ी पीठ के फैसले का पालन किया जाना चाहिए। इसके अलावा, धोए गए सिद्धांत का सार्वभौमिक अनुप्रयोग नहीं है। हो सकता है कि आगे की पदोन्नति के लिए सरकारी कर्मचारी के मामले पर विचार करते समय प्रासंगिकता लेकिन ऐसे मामले में नहीं जहां कर्मचारी का मूल्यांकन समीक्षा प्राधिकरण द्वारा यह निर्धारित करने के लिए किया जा रहा है कि क्या वह सेवा में बनाए रखने के लिए उपयुक्त है या उसे अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने की आवश्यकता है, क्योंकि समिति को उसके "पूरे सेवा रिकॉर्ड" को ध्यान में रखते हुए उसकी उपयुक्तता का आकलन करना है।

27. तत्काल मामले की जांच उपरोक्त तथ्य किए गए कानूनी प्रस्तावों के आलोक में की जानी है।

28. याचिकाकर्ता के पिछले वर्षों के ए. सी. आर. में कुछ प्रविष्टियाँ, जो इस उद्देश्य के लिए प्रासंगिक हैं, उनका उल्लेख नीचे किया जा रहा है:

वर्ष टिप्पणी 1996-97 (i) ज्ञान-औसत

((ii) निपटान में शीघ्रता-खराब हो जाना

(iii) शुद्ध परिणाम-औसत 1997-98 (i) निपटान में शीघ्रता-औसत

((ii) दक्षता-औसत

((iii) शुद्ध परिणाम-सुधार करने में सक्षम औसत अधिकारी 1998-99 (i) निपटान में शीघ्रता-औसत

((ii) दक्षता-औसत

((iii) शुद्ध परिणाम-सुधार करने में सक्षम आउट-टर्न 1999-2000 (i) निपटान में शीघ्रता-औसत

((ii) दक्षता-औसत

((iii) प्रतिष्ठा-अच्छी नहीं है क्या वह किसी भी बढ़ी हुई शक्ति के प्रयोग के लिए उपयुक्त है-नहीं इनके अलावा, याचिकाकर्ता के खिलाफ निरीक्षण करने वाले न्यायाधीश द्वारा की गई प्रतिकूल टिप्पणियां निम्नानुसार दी गई हैं:

वर्ष टिप्पणी 30.08.1997 (i) ज्ञान-औसत, व्यापक अध्ययन की आवश्यकता है।

((iii) प्रतिष्ठा-कुछ फुसफुसाहट होती है लेकिन कुछ भी ठोस नहीं पाया जा सकता।

2001-02 ((i) निर्णय-औसत अर्थात्

((ii) दक्षता-औसत (ख)

((iii) सत्यनिष्ठा-गंभीर रूप से संदिग्ध

29. याचिकाकर्ता के उपरोक्त सेवा रिकॉर्ड से यह स्पष्ट है कि वह अपने पूरे सेवा जीवन में एक औसत अधिकारी बने रहे और कभी सुधार नहीं कर सके। उनकी बारी खराब रही थी; उन्हें वर्ष 1999-2000 में उनकी ईमानदारी/प्रतिष्ठा के बारे में प्रतिकूल प्रविष्टियां दी गई थीं और 1997 और 2001-2002 में निरीक्षण करने वाले न्यायाधीशों द्वारा इस संबंध में टिप्पणी की गई थी। याचिकाकर्ता ने एक गंजा दावा किया था कि प्रतिकूल प्रविष्टियों को अभी तक उन्हें सूचित नहीं किया गया है। उनके द्वारा बार-बार यह प्रस्तुत किया गया है कि उक्त प्रतिकूल प्रविष्टियों के खिलाफ उनके द्वारा किए गए अभ्यावेदन का निपटारा नहीं किया गया था से। निर्विवाद रूप से, अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए एक अधिकारी का आकलन करने के उद्देश्य से असंबद्ध प्रतिकूल प्रविष्टियों को ध्यान में रखा जा सकता है। याचिकाकर्ता ने यह खुलासा नहीं किया है कि प्रतिकूल प्रविष्टियों के खिलाफ अभ्यावेदन किस तारीख को किए गए थे। याचिकाकर्ता ने उक्त प्रतिकूल प्रविष्टियों को चुनौती नहीं दी थी, बल्कि उन्होंने केवल अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को चुनौती देना उचित समझा जो इस तरह की प्रतिकूल प्रविष्टियों का परिणामी प्रभाव रहा है। कानून प्राधिकरण से यह आकलन करते हुए कर्मचारी के "पूरे सेवा रिकॉर्ड" पर विचार करने की अपेक्षा करता है कि क्या उसे अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी जा सकती है, इस तथ्य के बावजूद कि प्रतिकूल प्रविष्टियों के बारे में उसे सूचित नहीं किया गया था और उन प्रतिकूल प्रविष्टियों के बावजूद अधिकारी को पहले पदोन्नत किया गया था। इसके अलावा, सुदूर अतीत में भी एक अधिकारी की ईमानदारी के बारे में एक प्रतिकूल प्रविष्टि अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने के लिए पर्याप्त है। न्यायिक अधिकारी के मामले की जांच की आवश्यकता होती है, जिसमें उसे समाज के अन्य अंगों से अलग माना जाता है, क्योंकि वह एक अलग क्षमता में राज्य की सेवा कर रहा है। न्यायिक अधिकारी के मामले पर माननीय मुख्य न्यायाधीश द्वारा विधिवत गठित उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की समिति द्वारा विचार किया जाता है और फिर समिति की रिपोर्ट को पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखा जाता है। पूर्ण न्यायालय द्वारा उचित विचार-विमर्श के बाद निर्णय लिया जाता है। बात है। इसलिए, मन का उपयोग न करने या दुर्भावनापूर्ण होने के आरोप लगाने की शायद ही कोई संभावना हो।

30. जो भी हो, याचिकाकर्ता के सेवा रिकॉर्ड से पता चला कि उसे जिला न्यायाधीश के नियमित संवर्ग में पदोन्नत नहीं किया गया था क्योंकि प्रतिकूल प्रविष्टियों के कारण वह इसके लिए उपयुक्त नहीं पाया गया था। याचिकाकर्ता को तदर्थ आधार पर अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के रूप में पदोन्नत किया गया और फास्ट ट्रैक कोर्ट में तैनात किया गया। यह निश्चित रूप से योग्यता (चयन) के आधार पर पदोन्नति नहीं थी। उच्च न्यायालय ने निष्पक्ष रूप से उनकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सिफारिश करने का निर्णय लिया था और राज्य प्राधिकरणों ने तदनुसार कार्य किया। निर्णय लेने की प्रक्रिया या निर्णय में कोई त्रुटि नहीं पाई जा सकती है।

31. याचिकाकर्ता की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ वकील, श्री सुनील कुमार द्वारा की गई दलीलों में हमें कोई बल नहीं मिलता है कि उच्च न्यायालय और राज्य द्वारा दायर जवाबी हलफनामे से पता चलता है कि जिला न्यायाधीश से मांगी गई कुछ रिपोर्टों पर विचार किया गया था, हालांकि ऐसी रिपोर्ट भी उपलब्ध नहीं थीं, और इसलिए, उस हद तक हलफनामा गलत है। वास्तव में, अभिलेख से यह स्पष्ट है कि पूर्ण न्यायालय के लिए रजिस्ट्री द्वारा नोट बनाने के समय, यह उल्लेख किया गया था कि रिपोर्ट अभी भी प्रतीक्षित थी। हालांकि, जब तक पूर्ण न्यायालय का निर्णय हुआ, तब तक रिपोर्ट उपलब्ध करा दी गई थी और उस पर विधिवत विचार किया गया था। श्री अशोक माथुर और श्री अनिल के. झा, प्रत्यर्थियों की ओर से पेश विद्वान वकील ने याचिकाकर्ता की सेवाओं से संबंधित मूल रिकॉर्ड और न्यायिक आयुक्त, रांची द्वारा दिनांकित 05.04.2003 द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट हमारे सामने रखी थी, जिन्होंने बड़ी संख्या में तथ्यों पर विचार करने के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष दर्ज किया:

"हालांकि, गोपनीय जाँच पर मैंने पाया है कि उनकी सामान्य प्रतिष्ठा इतनी अच्छी नहीं है, लेकिन फिर भी कोई भी उनकी सामान्य प्रतिष्ठा के खिलाफ कोई विशिष्ट मामला लेकर मेरे पास नहीं आया।

इस प्रकार, याचिकाकर्ता की ओर से किया गया उपरोक्त निवेदन बेतुका है।

32. इस न्यायालय के निर्णयों पर निर्भरता रखना एम एस बिंद्रा (ऊपर) और बलदेव राज चड्ढा बनाम भारत संघ और अन्य, ए. आई. आर. 1981 एस. सी. 70, याचिकाकर्ता की ओर से यह प्रचार किया गया है कि प्रतिकूल प्रविष्टियां प्रामाणिक तरीके से और परिपत्रों आदि द्वारा निर्धारित आवश्यकता के अनुसार नहीं की गई थीं। इसलिए, अनिवार्य सेवानिवृत्ति का परिणामी आदेश अवैध है। ऐसा कोई तथ्यात्मक आधार नहीं है जिसके आधार पर इस तरह के दावे की जांच की जा सके। न ही उक्त प्रतिकूल प्रविष्टियों को रिट याचिका में कोई चुनौती दी गई है। याचिकाकर्ता ने अनिवार्य सेवानिवृत्ति दिनांक 20.05.2003 के आदेश को रद्द करने और प्रतिकूल प्रविष्टियों को रद्द नहीं करने की मांग की। अदालत द्वारा विशेष रूप से नहीं मांगी गई राहत नहीं दी जा सकती है। इसलिए, हमारे पास इस मुद्दे की आगे जांच करने का कोई अवसर नहीं है।

33. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हमें विवादित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई ठोस कारण नहीं मिलता है। याचिका में योग्यता का अभाव है और तदनुसार खारिज कर दिया जाता है। कोई लागत नहीं।

.....जे. (जे. एम. पंचाल) जे. (दीपाक वर्मा). जे. (डॉ. बी. एस. चौहान) नई दिल्ली, 10 सितंबर, 2010

यह अनुवाद किरण शंकर मिश्रा, पैनल अनुवादक द्वारा किया गया है।